बच्चों की पाठ्य-सामग्री : कुछ विचार

❑ कमलेश चन्द्र जोशी

प्राथमिक शिक्षा के उन्नयन को लेकर चलाये जा रहे कार्यक्रमों में गुणवत्ता की बहुत चिंता की जा रही है। इसके मद्देनजर पाठ्यक्रम-परिवर्तन और पाठ्यक्रम निर्माण में सामान्यत: इस पर जोर दिया जाता है कि यह बाल केन्द्रित, गतिविधि आधारित और स्थानीय परिवेश से जुड़ा हो। लेकिन उक्त पाठ्यक्रम के अन्तर्गत जब पाठ्य-सामग्री तैयार की जाती है, तो कई बार बच्चों के सोच और स्थानीय परिवेश की विशिष्टताओं की उपेक्षा कर दी जाती है । पाठ्य-पुस्तकों में चित्रों के प्रयोजन और प्रासंगिकता के प्रति भी अक्सर पर्याप्त जागरुकता नहीं दिखायी देती । प्रस्तुत लेख में श्री जोशी ने बहुत सारी उलझनों एवं कठिनाइयों का जिक्र किया है, क्या हम इन उलझनों को और सटीक अभिव्यक्ति दे सकते हैं ? क्या इनके कुछ सार्थक हल खोज सकते हैं ?

स्वतंत्रता के पचास वर्ष हो जाने के बाद आजकल हमारे देश में प्राथमिक शिक्षा के उन्नयन का कार्यक्रम बड़े जोर शोर से चल रहा है । इसके लिए कई राज्यों में विभिन्न नामों से अलग-अलग परियोजनायें चल रही हैं । इन कार्यक्रमों में यह जोर दिया जा रहा है कि व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन कर गुणवत्तापूर्ण प्राथमिक शिक्षा पर ध्यान दिया जाये । शिक्षक-बच्चों के अनुपात में समानता लाने की कोशिश की जाये तथा बच्चों के लिए बाल-केन्द्रित व रूचिपूर्ण शिक्षा की व्यवस्था की जाये जिससे बच्चे लगातार स्कूल आयें और उनकी स्कूल में रूचि बने । इसके लिए तमाम स्तरों पर प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्यशाला आदि आयोजित की जा रहीं हैं ।

इन कार्यक्रमों में प्राथमिक स्कूल के पाठ्यक्रम में भी मूलभूत परिवर्तन किये जा रहे हैं । यह हमें जरूरी भी लगता है क्योंकि हमारे देश में चलने वाला पाठ्यक्रम आमतौर पर हमेशा शिक्षक केन्द्रित ही रहा है न कि शिक्षार्थी केन्द्रित । इसके अलावा वर्तमान पाठ्यक्रम में अधिकतर तथ्यों को रटने पर ही जोर दिया जाता रहा है। सीखने वाले की सोच व उसके चिन्तन पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया जाता। इसलिए जरूरत इस बात की है कि बच्चों के लिए पाठ्यक्रम ऐसा हो जो उन्हें रोचक, अर्थपूर्ण व रचनात्मक शिक्षा प्रदान कर सके ।

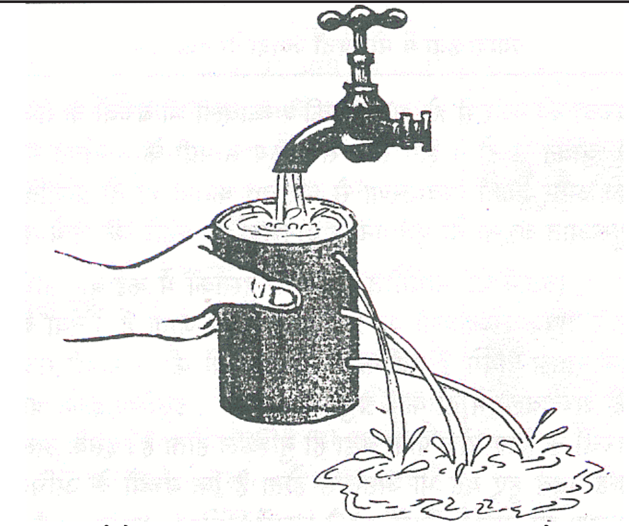
उपरोक्त क्रम में नवीन पाठ्यक्रम निर्माण की प्रक्रिया चल रही है । इस पाठ्यक्रम में यह खास बात उभर कर आ रही है कि बच्चों की पाठ्य-पुस्तकों में स्थानीय ज्ञान व बच्चों की समझ को महत्व देते हुए एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित किया जा सके जो कि बाल-केन्द्रित हो । साथ में इस बात का भी ध्यान रखा जाए कि पाठ्य-पुस्तकें इस तरह से लिखी जायें जो बच्चों के लिए रोचक व गतिविधि आधारित हों और बच्चों में उत्सुकता बढ़ा सकें ।

इस पाठ्यक्रम का निर्माण शिक्षा के इन मूलभूत सिद्धांतों को ध्यान में रखकर किया जा रहा है कि बच्चा अपनी शिक्षा के शुरुआती दौर में अपने आसपास के परिवेश से जल्दी सीखता है । अपने आसपास के बिम्ब बना पाना तथा उनके बारे में सोच पाना बच्चों के लिए ज्यादा सरल है । इसलिए पाठ्य सामग्री में स्थानीय ज्ञान व परिवेश का होना जरूरी है ।

अब हम अगर बच्चों की पाठ्य सामग्री को उनके आसपास के पर्यावरण, बाल-केन्द्रित शिक्षा व वैज्ञानिक समझ के संदर्भ में देखने का प्रयास करें तो हमारे सामने कुछ द्वन्द उभरकर आते हैं। इस संबंध में मुझे बच्चों से बातचीत का एक अनुभव याद आता है, उसकी चर्चा मैं यहां करना चाहूंगा । एक बार एक अनौपचारिक शिक्षण केन्द्र में बच्चों से बातचीत चल रही थी कि बारिश कैसे होती है ? इस बातचीत का उद्देश्य था कि बच्चों से बातचीत करके उनके स्वयं के ज्ञान को आंका जाए । इस बातचीत में बच्चों ने बताया कि जब शंकरजी अपनी जटा खोल देते हैं तो बारिश होती है तथा एक दूसरे बच्चे ने बताया कि जब अल्लाह आकाश में कपड़े धोते हैं तो जो उसकी छींटें पड़ती हैं तो उससे बारिश होती है । अब बच्चों की जानकारी पर हम गौर करें तो हमें बच्चों की सोच साफ पता चलती हैं लेकिन अब दिक्कत कहां पर आती है कि इन नौ वर्ष के बच्चों को वारिश होने की वैज्ञानिक समझ हम कैसे प्रदान करेंगे ? क्योंकि हमें नहीं लगता कि इतने छोटे बच्चे बारिश होने की वैज्ञानिक अवधारणा को इतनी आसानी से समझ जायेंगे । (रटने की बात हम छोड़ दें कि समुद्र की भाप से बादल बनते हैं फिर बादल पहाड़ों से टकराते हैं तो बारिश होती है, आदि बारिश की पूरी वैज्ञानिक जानकारी।) क्योंकि यहां हमें लगता है कि छोटे बच्चों के लिए बारिश की अर्मूत अवधारणाओं की कल्पना कर पाना असंभव है क्योंकि बाल-मनोविज्ञान के अनुसार 10 वर्ष से छोटे बच्चे अर्मूत अवधारणाओं को इतनी जल्दी आत्मसात नहीं कर

पाते हैं । अब यहां पर प्रश्न उठता है कि हम बालकेन्द्रित शिक्षा, स्थानीय ज्ञान व वैज्ञानिक समझ को ध्यान में रखते हुए बच्चों को बारिश की वैज्ञानिक अवधारणा को कैसे समझायेंगे ? इसके लिए क्या प्रयास किये जाने चाहिए ? क्या ऐसे विषयों को शुरूआत में छोड़ देना चाहिए ? इस पर विचार करना जरूरी है ।

उपरोक्त संदर्भ को ध्यान में रखते हुए एक चर्चा और करना चाहूंगा, भाषा की कुछ पाठ्य पुस्तकों में यह बताया गया है कि शंकरजी ने अपनी जटा खोल दी तो गंगाजी बह निकली और दूसरी ओर भूगोल की किताब में हमें यह पढ़ाया गया कि गंगा हिमालय से निकलती है । यहां पर हमें लगता है कि नये पाठ्यक्रम के निर्माण में इन बातों को सही नजरिये से रखने का प्रयास करना चाहिये ।



गहराई के साथ-साथ पानी का दबाव बढ़ता जाता है ।

इसी तरह बच्चों का भाषा संबंधी पाठ्यक्रम विकसित करते समय इस बात पर ध्यान रखा जा रहा है कि इनमें बच्चों को भाषा जल्दी सिखाने के लिए उनके स्थानीय परिवेश के किस्से कहानियों, लोक-कथाओं का प्रयोग किया जाए । इनके उपदेशात्मक व नैतिक मूल्यों को बदल कर रखा जाये । इसे बाल-केन्द्रित बनाया जाये जिससे बच्चों की पढ़ने में रूचि बने । इस संबंध में मुझे तमाम आदिवासी कथायें याद आती हैं । इन लोक-कथाओं में वैज्ञानिक समझ तो बिल्कुल नहीं होती क्योंकि वहां पृथ्वी बनने के कारण कुछ और ही हैं । अब अगर हम आदिवासी बच्चों के साथ काम करें तो इस तरह की कथायें हमें खूब मिलेंगी और यह भी सच है कि इन कथाओं में अदभुत फंतासी होती है, जो छोटे बच्चों के लिए उनका कल्पना लोक बुनती हैं जिन्हें बच्चे पसंद भी करते हैं। अब यहां पर फिर सवाल खड़ा होता है कि इन कथाओं को वैज्ञानिक समझ में हम कैसे बांधे ? अगर इसमें बांधते हैं तो यह उन बच्चों के लिए कितना प्रासंगिक होगा जिन्होंने बाहर की दुनिया देखी ही न हो ।

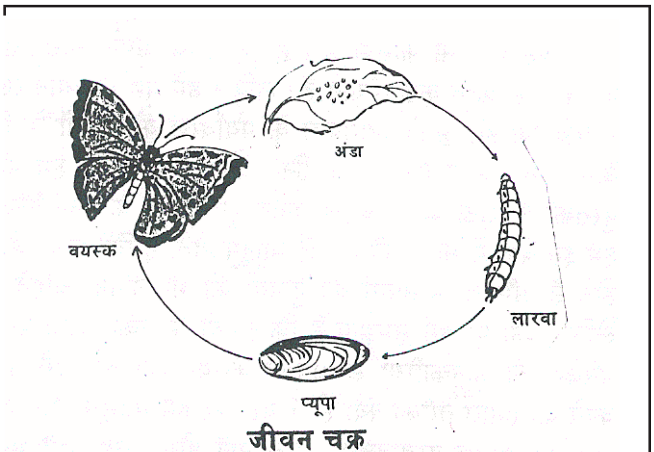
इसी के अन्तर्गत एक बात और उभरकर आती है कि हमारे स्थानीय किस्से-कहानियों में कुछ खास तरह के मिथ होते हैं, जो बच्चे को स्टीरियो टाइप इमेज देते हैं । जबकि आप बच्चों की तमाम कहानियां पढ़ें तो उसमें कुछ खास तरह की बातें उभरकर आयेंगी। जैसे कौआ हमेशा चालाक ही होता है, सेठ जी कंजूस ही होंगे और पंडित जी हमेशा खाऊ ही होंगे । अब यहां पर सवाल है कि कई वर्षों से चली आ रही इस इमेज को हम कैसे तोड़ें ? और इसके लिए हमें क्या प्रयास करने चाहिए ?

प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रमों में इस बात पर जोर दिया जा रहा है कि पाठ्यक्रम बच्चों के स्थानीय संदर्भ का होना चाहिए । इस बारे में मेरे झुग्गी बस्तियों में काम करने के कुछ अनुभव हैं । वहां काम करते हुए मैंने पाया कि बच्चे यहां पर पुलिस का व्यवहार बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि पुलिस किस तरह पैसे लेकर झुग्गियां बनवा देती है ? सुरक्षाकर्मी किस तरह पैसे लेकर कोयले की गाड़ी से कोयला उतरवा देते है ? इसी तरह से फुटपाथ पर रहने वाले बच्चों की जिन्दगी पर गौर करें तो ऐसे ही तमाम अनुभव निकल कर आयेंगे । क्या इन बच्चों के अनुभवों को हम पाठ्यक्रम में जगह दे पायेंगे कि पुलिस व स्थानीय प्रशासन का उनके साथ क्या रवैया रहता है ? ये बातें हमें सोचने के लिए मजबूर करती हैं कि इन चीजों को हम बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम के अन्तर्गत कैसे जगह दें ?

यह बात सौ फीसदी सच है कि बच्चे अपने आसपास के पर्यावरण से बहुत कुछ सीखते हैं। लेकिन हमें यह भी ध्यान रखना चाहिये कि हम अपने आसपास के पर्यावरण को बच्चों के लिए कैसे प्रस्तुत करते हैं ? इसके लिए यह जरूरी है कि हम पाठ्य पुस्तकों के पाठों को रूचिपूर्ण बनाते हुए बच्चों के लिए लिखें । हमें इस बात में भी काफी सच्चाई मालूम होती हैं कि बच्चे जिज्ञासु होते हैं और वे आसपास की दुनिया को भी जानना चाहते हैं । लेकिन यहां पर हमें समझना है कि बच्चों को किस स्टेज पर नये परिवेश की जानकारियों से अवगत कराया जाए तथा इसे प्रस्तुत करने का हमारा तरीका क्या हो ? यहां पर हमें महसूस होता है कि जब तक हमारा प्रस्तुतिकरण सरस नहीं होगा; वह भारी भरकम शब्दावली और अमूर्त अवधारणाओं से भरा होगा, तब तक बच्चों के लिए नीरस होगा । इसलिए आवश्यक है कि बच्चों का पाठ्यक्रम रोचक बनाने के लिए हमें उसे स्थानीय संदर्भ, बाल मनोविज्ञान व वैज्ञानिक दृष्टिकोण के संतुलन को ध्यान में रखते हुए बुनना होगा। ताकि बच्चे ऊबे नहीं और उसके पाठों को आसानी से ग्रहण कर सकें ।

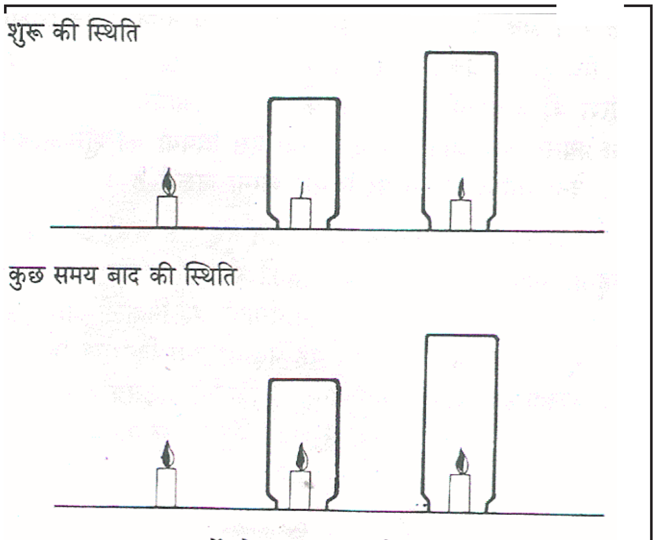
बच्चों की शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे नवीन शोधों से यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि बच्चों की पाठ्य सामग्री को रोचक बनाने में उसका प्रस्तुतीकरण व उसमें बच्चों के संदर्भ युक्त सार्थक चित्रों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है । चित्रों से सजी किताब बच्चों को पढ़ने के लिए प्रेरित करती है। अकसर यह भी देखा जाता है कि चित्रों वाली किताब में छोटे बच्चे ये जानने के उत्सुक रहते हैं कि इन चित्रों में क्या बात हो रही होगी ? ये दोनों कौन होंगे ? ये कहां जा रहे होंगे ? आदि। यहां पर यह ध्यान देने की जरूरत भी है कि स्कूल पूर्व के वर्षों में बच्चों के लिए चित्र ज्यादा महत्वपूर्ण होते हैं, शब्द कम । वे इस उम्र में लिखित शब्दों से ज्यादा परिचित नहीं होते क्योंकि वे किताब से रिश्ता बनाना शुरू ही कर रहे होते हैं । इसलिए इस समय बच्चों के लिए चित्रों का महत्व बहुत बढ़ जाता हैं क्योंकि चित्रों की दुनिया उनके बहुत करीब होती है और बच्चों के साथ काम करते हुए यह भी अनुभव किया गया कि इस चरण में चित्रों वाली किताब को उलट पुलट कर देखना बच्चे बहुत पसन्द करते हैं तथा अपने आप किताब के चित्रों से तालमेल बनाते हुए कुछ न कुछ बोलने के लिए प्रेरित होते हैं । वे चित्रों को अपने अनुभवों, घर-परिवार व आसपास के परिवेश से खूबसूरती से जोड़ते हुए एक अर्न्तसंबंध बनाते हैं ।

इसी तरह पाठों के प्रस्तुतिकरण के बारे में यह बात स्पष्ट हुई है कि बच्चों की पाठ्यसामग्री को रूचिपूर्ण बनाने के लिए इसका प्रस्तुतिकरण भी बहुत मायने रखता है। बच्चों की ढेर सारी



जीवन चक्र

पाठ्यसामग्री पढ़ने के बाद यह महसूस होता है कि बच्चे तमाम अवधारणायें केवल इसलिए नहीं समझ पाते क्योंकि इसमें प्रयोग किये गये शब्द इतने कठिन होते हैं कि बच्चे उनका अर्थ ही नहीं निकाल पाते । इसके अलावा उन्हें बच्चों के लिए प्रस्तुत करने का ढंग भी बेहद नीरस होता है जो बच्चों के पढ़ने को बोझिल बना देता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि पाठ का



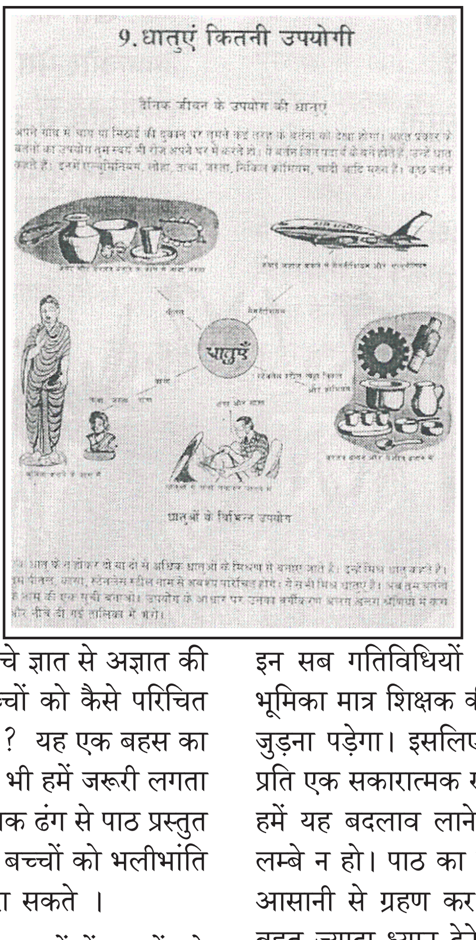
ज्यादा हवा में मोमबत्ती ज्यादा देर तक जलेगी

प्रस्तुतिकरण बच्चों की नजर से हो और उसकी शब्दावली भी बच्चों के रोजमर्रा के जीवन से हो । इसी तरह से पाठ्य सामग्री के अर्न्तगत बच्चों को अगर किसी अवधारणा से परिचित कराना हो तो प्रस्तुति की शुरूआत बच्चों के पूर्वज्ञान व अनुभवों के सहारे की जाये ।

विज्ञान पर आधारित शुरुआती पुस्तकों में कई बार सीधे ही पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग कर दिया जाता है । क्या बच्चे इन्हें समझ पायेंगे ? क्योंकि ये शब्द बच्चों की व हमारी रोजमर्रा की शब्दावली में तो कहीं प्रयुक्त होते नहीं । इसलिए इनके बारे में बच्चों के लिए सोच पाना बड़ा ही मुश्किल होता है। इसके अलावा उन्हें पढ़ते हुए यह भी अहसास होता है कि बच्चों के अधिकतर प्रकरण इस तरह से लिखे गये है जिनमें लिखित पाठ ज्यादा हैं तथा बच्चों के लिए स्वत: कुछ करने को बहुत कम । बच्चों के लिए वस्तुओं के गुण-धर्म का पता करना व खोजबीन करने के अवसर बहुत कम हैं । हालांकि पाठ्य-पुस्तकों में इस तरह से उप शीर्षक हैं - 'आओ इसका पता लगायें, आओ इसे करके समझें,' आदि लेकिन प्राथमिक स्कूलों में जाकर अनुभव करने पर पता चलता है कि इस तरह के मौके बच्चों को मिलते ही नहीं । केवल विज्ञान के पाठों के पैराग्राफ को एक एक करके बच्चों से पढ़वा कर शिक्षक उसे अपने शब्दों में समझा देता है और इसी पाठ पर आधारित प्रश्नों के उत्तर लिखवा दिए जाते हैं जिन्हें केवल बच्चे मंत्रों की तरह रट लेते हैं । यहां पर कुल मिलाकर कहना है कि बच्चों को खुद करके अपने जीवन्त अनुभवों से सीखने के मौके न के बराबर हैं । इसके अलावा विज्ञान की पाठ्य पुस्तकों में यह भी देखा गया है कि इसमें बच्चों के आसपास के परिवेश पर आधारित पाठ्य-सामग्री व उन पर आधारित प्रयोग बहुत कम हैं । जबकि हमें लगता है कि अध्यापक अपने आसपास के परिवेश में पायी जाने वाली चीजों का

प्रयोग विज्ञान सिखाने में अच्छे ढंग से कर सकते हैं । इसके अलावा बच्चों के आसपास की सामग्री विज्ञान शिक्षण को रोचक बनाती है तथा बच्चे इन चीजों में खोजबीन व अवलोकन संबंधी कार्य भी आसानी से कर सकते हैं तथा बच्चों को इस सामग्री का प्रयोग करने/दोहराने संबंधी क्रियाओं में भी आसानी रहती है।

इसी तरह किताबों के चित्रों में बच्चों को प्रयोग करते हुए खूब दिखाया जाता है लेकिन वास्तविक रूप में अगर हम विद्यालय में जाकर देखें तो वहां पर विज्ञान संबंधी प्राथमिक उपकरण भी नहीं मिलेंगे । इस तरह से हमारी समझ में आता है कि किताबों में यह सब बातें बिल्कुल सतही रूप में नजर आती है। इन चित्रों में यह भी गौर करने की बात है कि अगर बच्चे कोई प्रयोग कर रहे हैं तो उन्हें बहुत ही गंभीर मुद्रा में दिखाया गया है जो एक प्रौढ़ता का अहसास देते हैं । इसलिए वह चित्र बच्चों के मन में एक नीरस भाव पैदा करते हैं । इन चित्रों को अगर हम थोड़ा गौर से देखें तो यह बच्चों की आम स्कूली दुनिया से अलग थलग दिखाई पड़ते हैं क्योंकि इनमें उनके आम विद्यालयी जीवन का सार्थक स्पन्दन कहीं नहीं दिखाई पडता। इसलिए ये चित्र बच्चों में अपना कोई असर पैदा नहीं करते ।


9. धातुएं कितनी उपयोगी

दैनिक जीवन के उपयोग की धातुएं

धातुएं

धातुओं के विभिन्न उपयोग

विज्ञान के प्रारम्भिक पाठ्यक्रम में तमाम अवधारणाएं जैसे सौरमंडल, मौसम व ऋतु-परिवर्तन आदि ऐसी हैं जो बच्चों के मानसिक स्तर के अनुरूप नहीं प्रतीत होती हैं उनके बारे में एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सोच पाना बहुत ही मुश्किल होता है । यहां पर हमें यह भी जरूरी लगता है कि अगर बच्चे ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ रहे हैं तो इन अवधारणाओं से बच्चों को कैसे परिचित करवाया जाये ? इनका प्रस्तुतिकरण कैसा हो ? यह एक बहस का मुद्दा हो सकता है और इस पर विचार करना भी हमें जरूरी लगता है क्योंकि यह सौ फीसदी सच है कि बिना रोचक ढंग से पाठ प्रस्तुत किये (जिनमें गतिविधियां शामिल हों), हम बच्चों को भलीभांति वैज्ञानिक अवधारणाओं से परिचित नहीं करा सकते ।

अब यह बात आती है कि प्राथमिक स्कूलों में बच्चों को विज्ञान कैसे पढ़ाया जाय ? इसका क्या स्वरूप हो ? इसकी शिक्षण विधियां व पाठ्य-पुस्तकें कैसी हों ? इन प्रश्नों के उत्तर हमें ढूंढने होंगे । अगर हम शिक्षा के एक सर्वमान्य सिद्धांत की ओर गौर करें कि बच्चे खुद करके बहुत कुछ सीखते हैं तो हमारे सामने विज्ञान पढ़ाने की कुछ कुछ तस्वीर स्पष्ट होती है । खुद करके तथा प्रयोग करके सीखना विज्ञान के लिए तो बहुत महत्वपूर्ण है । इसके अन्तर्गत हम पायेंगे कि बच्चों की विज्ञान की कक्षा व पाठ्य-पुस्तकों में इस तरह की बाते हों जिसमें बच्चे अवलोकन कर सकें । वस्तुओं के गुण-धर्मों को पहचान सकें व उनके आपसी अन्तर-संबंधों को पहचानते हुए अपना एक नजरिया विकसित कर सकें । इसके अलावा यह भी जरूरी है कि इसके अन्तर्गत बच्चों को अनुमान लगाना, जानकारियों को एकत्र करके विश्लेषण करना तथा प्रश्न पूछने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जो कि प्राथमिक विद्यालयों में न के बराबर होता है ।

शिक्षकों के लिए भी यह बहुत जरूरी है कि वह कक्षा में ऐसे वातावरण का निर्माण करें जो बच्चों की जिज्ञासा को जागृत करे तथा उन्हें खुद प्रयोग करने को उकसायें । इसके लिए प्रयोग ऐसे हों जिनमें बच्चे पूर्वानुमान लगाने की कोशिश करें कि आगे क्या होगा, जिसका अपेक्षित प्रयोग किया जाये। इसके अलावा बच्चों को ऐसे प्रयोग देना, जो उन्हें चमत्कार सा लगे तथा उनके सामने कोई ऐसा दावा करना जिससे उन्हें सही या गलत साबित करने के लिए प्रयोग ढूंढना पड़े । लेकिन यहां पर यह ध्यान देना पड़ेगा कि हमारे दावे ऐसे हों जिनकी जांच आसान प्रयोग व गतिविधियों से संभव हो । यहां पर यह बात भी जरूरी है कि दावे समझने में आसान होने चाहिए और प्रयोगों के अवलोकन/परिणामों से सीधे निष्कर्ष निकलने चाहिये ।

इसके अलावा चौथी-पांचवी के बच्चों को छोटे-छोटे प्रोजेक्ट करने के लिए भी उत्साहित किया जाना चाहिए । लेकिन इन सब गतिविधियों को आयोजित करने के बाद शिक्षक की भूमिका मात्र शिक्षक की न हो। इसमें उसे बच्चों के साथ खुद भी जुड़ना पड़ेगा। इसलिए यह बहुत जरूरी है कि शिक्षक बच्चे के प्रति एक सकारात्मक रवैया रखें। इसके अलावा पाठ्य-पुस्तकों में हमें यह बदलाव लाने की कोशिश करनी होगी कि पाठ ज्यादा लम्बे न हो। पाठ का वाक्य-विन्यास इस तरह का हो जिसे बच्चे आसानी से ग्रहण कर सकें । इसके लिए इनमें प्रस्तुतिकरण पर बहुत ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है । इस शिक्षण का यह भी उद्देश्य हो कि इसमें बच्चे खुद करते हुए अपने पर्यावरण के प्रति जिज्ञासु व संवेदनशील नजरिया विकसित कर सकें। यहां पर हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि केवल तथ्यात्मक जानकारियों से काम नहीं चलेगा। इन सब बातों पर अमल करते हुए हम बच्चों के प्रारंभिक विज्ञान को रोचक, रूचिपूर्ण व उद्देश्य-परक बना सकते हैं।◆